नेट ज़ीरो उत्सर्जन – विकासशील देशों के प्रति अन्याय

sanskritiias.com/hindi/news-articles/net-zero-emissions-injustice-to-developing-countries

(प्रारंभिक परीक्षा- अंतर्राष्ट्रीय महत्त्व की सामयिक घटनाएँ; मुख्य परीक्षा : सामान्य अध्ययन, प्रश्नपत्र- 3 विषय- पर्यावरण; संरक्षण, पर्यावरण प्रदूषण और क्षरण, पर्यावरण प्रभाव का आकलन)

संदर्भ

वर्तमान में जलवायु परिवर्तन की समस्या लगातार गंभीर होती जा रही है, जिसने विश्व के सभी देशों के समक्ष चुनौती प्रस्तुत की है। जलवायु परिवर्तन की समस्या के समाधान हेतु वर्ष 2050 तक 'नेट ज़ीरो उत्सर्जन' के लक्ष्य की प्राप्ति को अति महत्त्वपूर्ण माना जा रहा है।

नेट ज़ीरो उत्सर्जन

नेट ज़ीरो उत्सर्जन का तात्पर्य ग्रीन हाउस गैसों के उत्सर्जन को शून्य स्तर तक लाना है। इसके लिये आवश्यक है कि जीवाश्म ईंधनों का कम से कम प्रयोग किया जाए तथा इनके दुष्प्रभावों को कम करने वाली तकनीकों के विकास एवं प्रयोग को प्रोत्साहित किया जाए।

जलवायु न्याय

- जलवायु न्याय पृथ्वी के प्रत्येक व्यक्ति को स्वास्थ्य एवं गरिमापूर्ण जीवन का अधिकार प्रदान किये जाने से संबंधित है। इसके लिये आवश्यक है कि विकसित देश पर्यावरण संरक्षण के संबंध में कर्तव्य पालन के साथ-साथ विकासशील देशों में रहने वाले गरीब एवं कमज़ोर वर्ग के हितों के संरक्षण से संबंधित अपने दायित्वों के निर्वहन करें।
- जलवायु न्याय विकासशील देशों को विकसित होने के लिये भी पर्याप्त अवसर प्रदान करता है। इसके लिये आवश्यक है कि विकसित देश गंभीरतापूर्वक अपने दायित्वों का निर्वहन करें। किंतु प्रायः यह देखा गया है कि विकसित देश अपने उत्सर्जन को सीमित करने के स्थान पर इसके बोझ को विकासशील देशों पर स्थानांतरित करने का प्रयास करते हैं, जिससे इन देशों का विकास बाधित होता है।
- उल्लेखनीय है कि भारत के प्रयास से 'जलवायु न्याय' शब्द को पेरिस समझौते की प्रस्तावना में भी शामिल किया गया है।

विकसित देशों का उत्तरदायित्व

- वर्ष 1992 में 'संयुक्त राष्ट्र जलवायु परिवर्तन फ्रेमवर्क सम्मेलन' (UNFCCC) में यह स्वीकार किया गया कि पृथ्वी को वैश्विक तापन से बचाने की ज़िम्मेदारी सभी की है, परंतु यह ज़िम्मेदारी उन देशों की अधिक है, जिन्होंने तुलनात्मक रूप से कार्बन का अत्यधिक उत्सर्जन किया है।
- वर्ष 1992 के अभिसमय में भी "सामान्य लेकिन विभेदित उत्तरदायित्व और संबंधित क्षमता" (Common but Differentiated Responsibilities and Respective Capabilities) का सिद्धांत निहित है। यह सिद्धांत जलवायु परिवर्तन की समस्या के समाधान के लिये अलग-अलग देशों की विभिन्न क्षमताओं और अलग-अलग उत्तरदायित्वों को स्वीकार करता है।
- ग्रीन हाउस गैसों के उत्सर्जन में कटौती के लिये बाध्यकारी प्रावधान लागू करने के उद्देश्य से वर्ष 1997 में 'क्योटो समझौता' किया गया। यह समझौता वर्ष 1992 में हुए अभिसमय के सिद्धांतों एवं प्रावधानों पर आधारित है। इसमें ग्रीन हाउस गैसों के उत्सर्जन में वर्ष 1990 के स्तर से 5 प्रतिशत की कमी का लक्ष्य निर्धारित किया गया और विकसित देशों के लिये उत्सर्जन में कटौती की सीमा तय की गई।
- वर्ष 2015 में संपन्न पेरिस समझौते में वैश्विक तापन को औद्योगिक अवधि से पूर्व के स्तर से 2 डिग्री सेल्सियस तक नीचे रखने का प्रावधान किया गया। इस समझौते में भी ग्रीन हाउस गैसों में कमी के लिये विकसित देशों द्वारा अन्य देशों की तुलना में अधिक प्रयास करने पर बल दिया गया था।
- 'क्लाइमेट एक्शन ट्रेकर रिपोर्ट' के अनुसार प्रमुख विकसित देशों द्वारा इस दिशा में किये जा रहे प्रयास पेरिस जलवायु समझौते के लक्ष्यों के अनुरूप नहीं हैं। यह विकसित देशों के अपने दायित्वों से विमुखता को दर्शाता है। जबकि भारत एवं अन्य विकासशील देशों द्वारा पूरी निष्ठा के साथ पर्यावरण संबंधी दायित्वों का निर्वहन किया जा रहा है।

विकासशील देशों का पक्ष

- पर्यावरणीय समस्याओं के निपटारे के लिये दायित्वों का उचित बँटवारा अत्यधिक आवश्यक है। विकसित देशों द्वारा विकासशील देशों पर वैश्विक उत्सर्जन में वृद्धि का आरोप लगाकर अपनी ज़िम्मेदारी से बचने का प्रयास किया जाता है, जबकि आज भी विकसित एवं विकासशील देशों के मध्य प्रति व्यक्ति कार्बन उत्सर्जन में भारी अंतर विद्यमान है।
- विकसित देशों द्वारा औद्योगिक क्रांति के पहले से ही कार्बन का उत्सर्जन किया जा रहा है, जबकि विकासशील देशों में यह प्रक्रिया अब प्रारंभ हुई है। अतः विकासशील देशों पर अधिक बोझ डालने से उनकी विकास प्रक्रिया बाधित होगी।
- ग्रीन हाउस गैसों के उत्सर्जन के लिये विकसित देश विशेष रूप से उत्तरदायी हैं और ये देश आर्थिक एवं तकनीकी रूप से समृद्ध भी हैं। अतः इनके द्वारा विकासशील देशों को वैकल्पिक ऊर्जा के विकास के लिये तकनीकी एवं आर्थिक सहायता प्रदान की जानी चाहिये, जिससे उनका भी विकास सुनिश्चित हो सके।

- विकसित देशों द्वारा प्रायः अपनी आर्थिक स्थिति एवं विकास के बाधित होने का हवाला देकर बाध्यकारी समझौतों से खुद को बाहर रखने का प्रयास किया जाता है, जैसे- क्योटो समझौते से अमेरिका का बाहर रहना। अमेरिका ने स्वयं को पेरिस समझौते से भी बाहर कर लिया था, किंतु नई सरकार के आने के बाद उसने पुनः समझौते में वापसी की है। विकसित देशों के ऐसे गैर-ज़िम्मेदाराना रवैये से न केवल पर्यावरणीय लक्ष्यों की प्राप्ति में बाधा उत्पन्न होती है, अपितु विकासशील देशों को भी समस्याओं का सामना करना पड़ता है।

निष्कर्ष

जलवायु परिवर्तन के लिये विकसित देशों की औद्योगिकीकरण की नीतियाँ प्रत्यक्ष रूप से उत्तरदायी हैं। अतः यह आवश्यक है कि विकसित देशों द्वारा ग्रीन हाउस गैसों के उत्सर्जन में कटौती संबंधी मानको का कठोरतापूर्वक पालन किया जाए तथा विकासशील देशों के हितों के लिये वित्त, प्रौद्योगिकी एवं क्षमता निर्माण हेतु सहायता उपलब्ध कराई जाए। हालाँकि, यह भी ध्यान रखा जाना चाहिये कि इसकी पूरी ज़िम्मेदारी विकसित देशों पर ही नहीं थोपी जा सकती है। चूँकि जलवायु परिवर्तन एक वैश्विक समस्या है, अतः इसके लिये प्रयास भी सामूहिक रूप से ही होने चाहिये। इसके लिये आवश्यक है कि विश्व के सभी देशों द्वारा अपने-अपने दायित्वों का निर्वहन किया जाए।

Climate Change